छायावादी काव्य में गाँधी दर्शन के स्वर

*डॉ. नवज्योति भनोत

राजनीति में 'गांधी युग' सन् 1920 से 1940 तक रहा है। हिन्दी साहित्य में छायावाद का प्रारम्भ और सीमांकन सन् 1918 से 1938 तक किया गया है। निराला, पंत और प्रसाद ने लगभग इन्हीं वर्षों में लेखन प्रारम्भ किया। सन् 1916 में निराला की 'जूही की कली' पंत के पल्लव की कुछ पंक्तियॉं तथा सन् 1918 में प्रसाद की 'झरना' प्रकाश में आई। 1935 में कामायनी प्रकाशित हुई। 1936 में प्रान्तों में कांग्रेसी मंत्रिमण्डल स्थापित हुए और इसके साथ ही ब्रिटिश शासकों ने भारतीय प्रतिनिधियों का विश्वास प्राप्त किए बिना भारत के विश्वयुद्ध में शामिल होने की घोषणा कर दी, जिसके परिणामस्वरूप कांग्रेसी मंत्रिमण्डल ने त्याग–पत्र दे दिया। साहित्य में 'गांधी युग' लगभग 37–38 में आकर लड़खड़ाने लगता है और साहित्य में प्रगतिवादी काव्य प्रवृतियॉं सक्रिय हो जाती हैं। 1936 से 1939 तक के वर्षों में आधुनिक भारतीय इतिहास ने नवीन करवट ली। उधर छायावादी कवि भी छायावादी चेतना से बाहर आ रहे थे। पंत का युगांतर (1936) व निराला की 'अनामिका' में अनेक कविताएँ छायावादी जमीन से हटकर लिखी गई हैं। पंत जी मानते हैं कि गांधी जी के तप पूत व्यक्तित्व से जिस ओजस्वी सात्विक चैतन्य का जन्म उनके भीतर हुआ था। उसे युग की विषाक्त शक्तियों से टकराकर संघर्ष करना पड़ा, इसी संघर्ष में वे युग–जीवन में व्याप्त प्रच्छन्न विष के स्वरूप को समझ सके। उनके हृदय की, नवयुग मंगल के लिए एक सर्वांगपूर्ण रससिद्ध चैतन्य की खोज थी, जिसकी प्राप्ति के लिए गॉंधी जी का अन्तः स्पर्श पर्याप्त सहायक हुआ।[1]

निःसंदेह छायावादी कवियों और गांधी जी के व्यक्तित्व को भारतीय संस्कृति, भारतीय दर्शन एवं भारतीय साहित्य ने समान रूप से प्रभावित किया। इन सभी का कृतित्व संस्कृति का साहित्यिक तथा व्यावहारिक स्तवन प्रस्तुत करता है इसी समान धर्म रेखा के कारण दोनों की तुलना और प्रभाव स्थितियों का विवेचन किया जा रहा है –भौतिक सम्पन्न युग में यद्यपि मानव ने देश–काल पर विजय पाई फिर भी मानव हृदय पर विजय पाने का कार्य गांधी व उनके दर्शन के माध्यम से ही हो सकता है। सत्य, अहिंसा मानव–मन को आलोकित करती है जिससे आत्मा का उद्धार होता है।[2] कामायनी में श्रद्धा पशुवध का विरोध करती है, तकली कातती है और असहयोग का मार्ग अपनाती हुई मनु के हृदय परिवर्तन द्वारा उसका जीवन परिष्कार कर उसे हिंसा से अहिंसा की ओर उन्मुख करती हुई कहती है –

अपनी रक्षा में जो चल जाए तुम्हारा कहीं अस्त्र/वह तो कुछ समझ सकी हूँ मैं, हिसंक से रक्षा करे शस्त्र।।/पर जो निरीह जीकर भी कुछ, उपकारी होने में समर्थ/वे क्यों न जिए, उपयोगी बन, इसका मैं समझ सकी न अर्थ।।[3] श्रद्धा द्वारा अहिंसा का समर्थन करते हुए पशुपालन पर बल देना तथा पशुओं के प्रति सहानुभूति एवं सह्रदयता का बर्ताव भी वैष्णव धर्म एवं गांधीवादी विचारों का द्योतक है। वे कहती हैं –चमड़े उनके आवरण रहें ऊनों से मेरा चले काम,/वे जीवित हों मॉसल बन कर हम अमृत दुहें–वे दुग्धधाम[4]

संघर्ष सर्ग में इड़ा मनु को युद्ध बंद करने एवं प्रजाजनों को जीवित छोड़ने की बार–बार गुहार करती है। प्रसाद मानते हैं कि हिंसात्मक युद्धों द्वारा मानवता का विकास न होकर विनाश होता है। गांधी की दृष्टि में अहिंसा का अर्थ हत्या मात्र होना ही नहीं है। उन्होंने बुद्ध की करूणा एवं वैष्णव की दया के स्तर पर अहिंसा को रखा तथा सामाजिक, राष्ट्रीय और राजनीतिक स्तर पर भी इसका प्रयोग करने की बात कही। पंत की दृष्टि में भी सत्य अहिंसामय है और अहिंसा सत्यमय है। अहिंसा का अर्थ है सर्वव्यापी प्रेम तथा किसी को दुःख पहुँचाना ही हिंसा है।[1] पंत का विश्वास है कि गांधी के सत्य अहिंसा के ताने बानों से मानवपन का जन्म होगा।[2] प्रसाद ने हिंसा स्वार्थ एवं निर्दयता से परिपूर्ण कार्यों की निन्दा की एवं दूषित भावनाओं को त्याग कर अहिंसा, सत्य, सेवा परोपकार इत्यादि मूल्यों में ही मानवता का मूल माना। श्रद्धा, कर्म सर्ग में मनु से प्रश्न करती हुई कहती है– मनु क्या यही तुम्हारी होगी उज्ज्वल नव मानवता/जिसमें सब कुछ ले लेना हो हंत ! बची क्या शवता[3] गांधी जी प्रत्येक व्यक्ति के प्रति जागृत प्रेम या करूणा को अहिंसा का सटीक मापदण्ड मानते हैं उनके अनुसार अहिंसा का सार शाश्वत प्रेम में समाविष्ट है जो निस्वार्थ और निरपेक्ष है। प्रसाद जी भी भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल स्वरुप के साथ–साथ सत्य, अहिंसा, सेवा, पर दुःख कातरता, अपरिग्रह, परोपकार आदि उन्नत भावों के समावेश द्वारा विश्व जनीन धर्म एवं सार्वभौमिक संस्कृति की स्थापना करते हैं। कामायनी में एक ओर जहॉं ज्ञान, इच्छा, क्रिया का समन्वय निरुपित कर मानवता की प्रतिष्ठापना की गई है वहीं पंत की युगान्तर और युगवाणी में भी गॉंधी और साम्यवाद के सम्बन्धों की चर्चा की गई है। वे कहते हैं –मनुष्यत्व का तत्व सिखाता निश्चय हमको गॉंधीवाद।/सामूहिक जीवन विकास हित साम्ययोजना है अविवाद।।[4] प्रसाद काव्य में मानवतावादी संदेश निहित है। कामायनी में वे मानव के आत्मकेन्द्रित बनने की बजाय औरों को

* डॉ. भीमराव अम्बेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राजस्थान)

हंसते देखकर अपने सुख को विस्तृत बनाने की अवधारणा में विश्वास प्रकट करते हैं तथा मानव की स्वार्थी वृत्तियों को विकास में बाधक मानते हुए कहते हैं –अपने में ही सब कुछ भर कैसे व्यक्ति विकास करेगा।/यह एकांत स्वार्थ भीषण है अपना नाश करेगा।[5]

राजनीतिक एवं संकीर्ण मत मतान्तरों से परे, गांधी की विचारधारा शाश्वत मानवतावाद का निर्मम उद्घोष है। उन्होंने व्यक्तिगत शैली में, शाश्वत सत्य को दैनिक जीवन और उनकी समस्याओं पर लागू करने का प्रयोग किया। पंत ने भी विषमताओं, विसंगतियों, असमानताओं, शोषण–संघर्षों एवं अनेक संकीर्णताओं से मुक्ति, सामाजिक समरसता, समता, न्याय, जनहित एवं मानवता की सेवा में विश्वास प्रकट करते हुए 'स्वर्ण किरणें' काव्य संग्रह में लिखा है –मात्र मानवता रे अब देश/और सब देश प्रगति पद वेश/निखिल संस्कृतियों का नवनीत/शुभ्र नवमनुष्यत्व का बोध ![6]

प्रसाद ने वसुधैव कुटुम्बकम की भावना पर बल देते हुए संसार को सत्य सौन्दर्य एवॅं मॅंगल से परिपूर्ण मानकर प्राणिमात्र की सेवा में सुख माना। कामायनी के आनन्द सर्ग में एक यूटोपियाई समाज रचना का संदेश गांधी के सर्वोदयी समाज का प्रतिरूप है। कवि अणु–अणु एंव कण–कण को अपना बताकर एकता, अभिन्नता एवं अभेद के विचार का सुन्दर निरूपण करते हैं –सबकी सेवा न परायी, वह अपनी सुख–संसृति है/अपना ही अणु–अणु, कण,कण हृदयता ही तो विस्मृति है।[1]

गांधी दर्शन भारतीय उपनिषदों के मूल मंत्र ''ब्रह्म सत्यम जगत मिथ्या'' पर आधारित है उन्होंने सत्य की आध्यात्मिकता एवं मानव जीवन के भौतिक पक्षों की सार्थकता के मध्य समन्वय कर मौलिक व नवीन दर्शन का सूत्रपात किया। गांधी जी प्रत्येक मनुष्य को ब्रह्म की आध्यात्मिक सत्ता का ही लौकिक स्वरूप स्वीकार करते हुए सभी व्यक्तियों का परम कर्त्तव्य अनवरत ब्रह्म से एकाकार हो जाने में निहित मानते हैं। कामायनी का मूल उद्देश्य ही प्राणिमात्र की एकता एवं समता का प्रचार करना है। 'आनंद सर्ग' में यही बताया गया है कि जीवन में सेवा, त्याग, प्रेम और उदारता को धारण कर मानव जैसे ही स्वयं को सभी से अभिन्न समझने लगता है अथवा जैसे ही उसके हृदय में अभेद की प्रतीति होती है वह समरस होकर सर्वत्र एक ही चेतना को व्याप्त देखता है। भेदभाव तिरोहित कर, अखंड आनंद को प्राप्त करके शिवरूप हो जाता है। "छायावादी कवि पंत को भी आध्यात्मिक एवं भौतिकवाद के समन्वय के बिना मानव कल्याण संभव प्रतीत नहीं होता। उन्होंने मानवता और उसके प्रतिनिधि मानव को केन्द्र में रखकर अपनी आस्था का निर्माण किया है। शंखध्वनि, किरणवीणा, समाधिता आस्था, पौ फटने से पहले और पतझरऋ एक भाव क्रांति आदि सभी कृतियों में कवि की चेतना सामंजस्य के उस बिन्दु पर टिकी हुई है जहां से भविष्य और भावी मानवता का पथ प्रशस्त होता है।"[2] वे लोकायतन में कहते हैं –

आध्यात्मिक जागृति के प्रति,/उन्मुख अभी जन–भू मन,/एकांगी भौतिकता से,/संभव न श्रेय संवर्धन/और भौतिक आध्यात्मिकता में बॅंटकर,/रह सकते खण्ड न जीवित[3] पंत जीवन के बाह्य व आन्तरिक समन्वय पर बल देते हुए 'प्रीति अमृत से विरहित' भौतिक, आध्यात्मिक सिद्धि को व्यर्थ मानते हैं। वस्तुतः लोकायतन में जिस आध्यात्मिक दर्शन को अभिव्यक्ति मिली है, उसकी पीठिका गॉंधी दर्शन है, गांधी जी मानते हैं कि ईश्वर की साधना का सच्चा मार्ग, जीवन की समस्याओं से दृढ़तापूर्वक संघर्ष करने प्रशस्त होता है। उन्होंने इस अर्थ में मानव जीवन के सांसारिक क्रियाकलापों को आध्यात्मिक लक्ष्य की भॉंति ही महत्वपूर्ण और पवित्र माना है। पंत ने गांधी को चिर पुरातन, चिर नवीन तथा केवल शुद्ध–प्रबुद्ध आत्मा के रूप में देखा है। वे उनके व्यावहारिक आदर्श की प्रशंसा में कहते हैं। आदर्श व्यावहारिक तुम/युग सेतु कर गये निर्मित/भौतिक आध्यात्मिक जगत के/शिखरों पर सत्य समन्वित।[4]

लोकायतन में ही पंत जी ने गांधी को संस्कृति के नवगीत, त्याग की मूर्ति, अहिंसा–ज्योति, लोक–पुरूष, स्थित–प्रज्ञ, युग–नायक आदि नामों से अभिहित किया है। इस काव्य में सत्याग्रह आन्दोलन, नमक आन्दोलन, नौआखाली आदि की घटनाओं का भी उल्लेख है। खद्दर एवॅं गॉंधी टोपी पहनने वाले लोकायतन के पात्र हरिप्रसन्न गांधीवादी विचारों के वाहक हैं। इसमें स्त्रियॉं भी असहयोग आन्दोलन में भाग लेती हैं। ताली बजा कहा सखियों ने,/बोल महात्मा गॉंधी की जय,/मुक्ति यज्ञ में हम भी साक्षी होंगी,/होम स्त्रियों का दुःख भय।[5]

छायावादी काव्य में स्थान–स्थान पर वर्गहीन समाज की अनुगूॅंज सुनाई देती है। प्रसाद गॉंधीजी के अनुरुप अनेक स्थलों पर साम्प्रदायिक संकीर्णता तथा जाति–वर्ग भेद निरोहण पर बल देते हैं। वे चाहते हैं वर्ग विहीन समाज में व्यक्ति समान स्तर पर जीवन व्यतीत करें। डॉ. रामविलास शर्मा ने रेखांकित किया है कि प्रसाद का मानवतावाद ही रहस्यात्मक होकर भूमा–समरसता के धरातल पर वर्गहीन समाज की कल्पना में बदल गया है। निराला की धारणा है कि अपार धन का स्वामी होकर कोई महान और कृष शरीर पाकर लघु नहीं होता और न ही इससे उसकी पवित्रता और अपवित्रता का मूल्यांकन किया जा सकता है। वे गीतिका में कहते हैं –

जग के गौरव के सहत्रदल /दुर्बल नालों ही पर प्रतिपल/खिलते किरणोज्ज्वल चल, अचपल/सकल अमंगल खो,/वही विटप शत–वर्ष पुरातन/पीन प्रशाखाऍं फैला घन/अंधकार ही भरता क्षण–क्षण जन मन भावन हो।[1]

निराला वर्ग उत्पीड़न को समाप्त कर समाजवादी व्यवस्था की रचना करते हुए अमीरों की हवेली में किसानों की पाठशाला द्वारा धोबी, पासी, चमार एवं तेली से अंधेरें का ताला खुलवाकर समानता की प्रतिष्ठापना करते हैं तथा 'मानव–मानव से नहीं भिन्न निश्चय हों श्वेत कृष्ण' कहकर रंग जाति भाषा से परे मनुष्य मात्र के बंधुत्व की घोषणा करते हैं। निराला नारी को पुरुष के समान स्तर पर मानते हैं। उन्होनें सती प्रथा, बाल–विवाह, बहु विवाह, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा एवं वैश्यावृत्ति का विरोध किया। विधवा विवाह अन्तर्जातीय विवाह, स्त्री शिक्षा पर बल देते हुए परम्परागत बंधनों को तोड़ने का आह्वान किया।

तोड़ो–तोड़ो–तोड़ो कारा, / पत्थर की, निकले फिर, गंगा–जलधारा।[2] गॉधीजी ईश्वर को एक अवर्णनीय रहस्यपूर्ण सत्ता मानते हैं, जो समस्त पदार्थों में अनुस्यूत है। वे कहते हैं–मैं उसका अनुभव करता हूॅ तथापि देख नहीं सकता। वह अदृश्य सत्ता अनुभवगम्य होते हुए भी बुद्धि की परिधि के बाहर है। प्रसाद ने भी 'कामायनी' में उस अनंत रमणीय एवं व्यापक सत्ता को विराट और विश्वदेव कहकर 'एक सद् विप्रा बहुध वदन्ति' के कथन की सार्थकता सिद्ध की है।

हे विराट! हे विश्वदेव! तुम कुछ हो, ऐसा होता भान। / मंद्र–गंभीर–धीर–स्वर–संयुत यही कर रहा सागर गान।[3] पंत भी ''स्वर्णधूलि'' में तुम हो एक, स्वरुप तुम्हारे ही सब निश्चित। / विप्रों से बहुधा तुम बहु नामों से चर्चित।।[4] कहकर यही संकेत करते हैं। / गांधी का मानव जीवन के नैतिक प्रयोजन में विश्वास रहा है। वे अन्तरात्मा के आदेशों से शासित होते हुए समुदाय के हितों के प्रति निरपवाद समर्पण को आवश्यक मानते हैं। 'राम की शक्ति–पूजा' में रावण के वध के लिए युद्ध आधिभौतिक स्तर पर हुआ किंतु मंगलमय विजय के लिए आध्यात्मिक शक्ति का बल प्राप्त किया गया। निराला आध्यात्मिक शक्ति की साधना केवल मोक्ष के लिए नहीं बल्कि जगत्–हित के लिए करते हैं। नैतिक शक्ति की यह अनूठी कल्पना सम्प्रदाय से उपर उठकर न्याय के लिए संघर्ष करने वालों के लिए संबल बनती है। रावण द्वारा भौतिक ऐश्वर्य के बल पर अर्जित तमोगुणी एवं रजोगुणी साधना को ध्वस्त करने के लिए सत्वगुणी साधना द्वारा प्राप्त विनम्र आध्यात्मिक शक्तियों को खड़ा करना शक्ति का नैतिक प्रयोग ही है। राम के पास बाह्‌य शक्तियों की कमी नहीं थी। फिर भी वे अपने संकल्प को सत्य करने के लिए त्याग की साधना द्वारा महाशक्ति को आत्मलीन करने में विश्वास रखते हैं। निराला की 'राम की शक्ति पूजा' में असुर शक्ति पर राम की, अन्याय पर न्याय की, अमानवीयता पर मानवीयता की अथवा राष्ट्रीय मुक्ति संग्राम की विजय है। पंन्त ने अपने युग की वैज्ञानिक उपलब्धियों को भी स्वीकार किया किंतु ऐसी वैज्ञानिक उपलब्धियों पर श्रद्धा नहीं दिखाई जो आसुरी शक्ति बनकर मानव समाज को नष्ट करने के लिए निर्मित हुई हों उन्होंने आसुरी शक्तियों के परिष्कार की आवश्यकता पर बल देते हुए मानवतावादी स्वरुप को मुखरित किया।

आज मनुज को अणु–दानव की शक्ति से महत / मनुष्यत्व की शक्ति चाहिए : जीवन सक्षम[1] कामायनी के अन्तिम तीन सर्ग 'भौतिक विज्ञान' की श्रेष्ठता के सूचक न होकर आध्यात्मिक मूल्यों की समरसता से ओत–प्रोत है। इस समरसता के राज्य में विज्ञान को मनुष्य का सेवक और आध्यात्म तथा सामरस्य को विज्ञान के स्वामी होने की बात कही गयी है। वे चरखे को आधुनिक यंत्र युग और उसमें फैली कुरीतियों को दूर करने का एकमात्र उपाय मानते हैं 'चरखा गीत' में पन्त ने चरखे को शोषित जन का सेवक और पालक तथा आर्थिक दृष्टिकोण से स्वदेश का धन–रक्षक माना है खादी को भारत मॉ के लिए समृद्धि की रांका बताते हुए देश की दरिद्रता का तम दूर करने का साधन बताया है।[2] कामायनी में गॉधीवादी तर्क प्रस्तुत करने के साथ–साथ श्रद्धा तकली कातने में संलग्न दिखाई देती है।

मैं बैठी गाती हूँ तकली के परिवर्तन में स्वर विभोर / चल री तकली धीरे–धीरे प्रिय गये खेलने को अहेर।[3] सुमित्रानन्दन पन्त के लोकायतन में भी स्त्रियां तकली चरखा कातती हुई गांधीवादी दर्शन में विश्वास प्रकट करती हैं। तकली चरखे लेकर स्त्रीजन / सूत कातती ऋतु वर्णन, / नव जीवन पर बुनती–धुनती / नये विचारों से पिछड़ा मन। / सुनती गॉधी गौरव कीर्तन, / राष्ट्र जागरण के बन नायक / राम–कृष्ण की पुण्य भूमि में / प्रकट हुए जन भाग्य विधायक[4] कामायनी के ईर्ष्या सर्ग में श्रद्धा को धान बीनने, अन्न इकट्‌ठा करने, तकली कातने, वस्त्र बुनने, कुटीर बनाने आदि कार्यों में संलग्न दिखाकर गॉधीवादी विचारधारा को पोषित किया है।

जब देखो बैठी हुई वहीं बालियां बीनकर नहीं श्रांत / या अन्न इकट्‌ठे करती है होती न तनिक सी कभी कलांत, / बीजों का संग्रह और इधर चलती है तकली भरी गीत, / सब–कुछ लेकर बैठी है वह, मेरा अस्तित्व हुआ अतीत।[5] / उतरा की भूमिका में पंत ने इस देश पर गांधी के प्रभाव को स्वीकार किया है कि हमारा देश गांधी की ऐतिहासिक भूमि है। भारत का दान विश्व को राजनीतिक तंत्र या वैज्ञानिक मंत्र का दान नहीं हो सकता वह संस्कृति तथा विकसित मनोयंत्र की भेंट होगी। इस युग के महापुरुष गांधीजी भी अहिंसा को व्यापक सांस्कृतिक प्रतीक के ही रूप में दे गए हैं जिसे हम मानव चेतन का नवनीत अथवा विश्व मानवता का एकमात्र सार कह सकते हैं। महात्मा जी अपने व्यक्तित्व से राजनीति के संघर्ष कंटक–पुलकित कलेवर को संस्कृति का लिबास पहनाकर भारतीय बना गए हैं। उसका दान हम भुला भी दें, किंतु संसार नहीं भुला सकेगा क्योंकि अणु–मृत मानव जाति के पास अहिंसा ही एकमात्र जीवन अवलम्ब तथा संजीवन है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सुमित्रानन्दन पन्त, ग्राम्या पृ.सं.57 2. सुमित्रानन्दन पन्त, ग्राम्या–अहिंसा, पृ.सं.48 3. जयशंकर प्रसाद, कामायनी, ईर्ष्या सर्ग, पृ.सं.56 4. जयशंकर प्रसाद, कामायनी, ईर्ष्या सर्ग, पृ.सं.56 1. सुमित्रानन्दन पन्त, युगान्तर, पृ.सं.78 2. सुमित्रानन्दन पन्त, ग्राम्या, पृ.सं.84 3. जयशंकर प्रसाद, कामायनी, कर्म सर्ग, पृ.सं.51 4. सुमित्रानन्दन पंत–चिदम्बरा–समाजवाद–गांधीवाद,पृ.सं.50 5. जयशंकर प्रसाद, कर्म सर्ग, पृ.सं.52 6. सुमित्रानन्दन पन्त–स्वर्ण किरणें, पृ.सं.37 1. जयशंकर प्रसाद, कामायनी, आनन्द सर्ग, पृ.सं.124 2. हरिचरण शर्मा, छायावाद के आधार स्तम्भ, पृ.सं.326 3. सुमित्रानन्दन पन्त–लोकायतन, पृ.सं.38 4. सुमित्रानन्दन पन्त–लोकायतन, पृ.सं.34 5. सुमित्रानन्दन पन्त–लोकायतन, पृ.सं.52 1. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, गीतिका, पृ.सं.62 2. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, गीतिका, पृ.सं.73 3. जयशंकर प्रसाद–कामायनी–आशा सर्ग, पृ.सं.18 4. सुमित्रानन्दन पन्त–स्वर्णधूलि, पृ.सं.182 1. पतझर–एक भाव क्रान्ति, पृ.सं.91 2. पन्त–युगान्तर, पृ.सं.88 3. जयशंकर प्रसाद–कामायनी–ईर्ष्या सर्ग, पृ.सं.57 4. सुमित्रानन्दन पन्त–लोकायतन, पृ.सं.80 5. जयशंकर प्रसाद–कामायनी–ईर्ष्या सर्ग, पृ.सं.57